© 2018 IJSRSET | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099
Themed Section : Engineering and Technology

प्राचीन भारतीय इतिहास में मौर्य एवं गुप्तकाल के मध्य सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति : एक दृष्टि

Dhirendra Kumar Singh
UGC-Net –History,
Vill- Chhoti Bakawal,
Dist- Mau, UP

धर्मशास्त्रों की भांति कौटिल्य ने भी वर्णाश्रम को सामाजिक संगठन का आधार माना है। कौटिल्य ने वर्णाश्रम धर्म की रक्षा करना राजा का कर्तव्य माना है। समाज में ब्राह्मणों का सम्मानजनक स्थान था उन्हें सामाजिक, आर्थिक व कानून सम्बन्धी विशेषाधिकार प्राप्त थे। शिक्षक, पुरोहितों, वेदपाठी ब्राह्मणों को 'ब्रह्मदेय' भूमि दान में दी जाती थी, जो कि कर मुक्त थी।

प्रथम तीन वर्णों – ब्राह्मण, क्षत्रिय, तथा वैश्य की गणना 'द्विजाति' में की गयी जो उपनयन तथा अध्ययन के अधिकारी थे। समाज में छूआछूत की भावना बलवती हो गयी तथा यह माना गया कि शूद्र जाति के स्पर्श मात्र से ब्राह्मण एवं अन्य वर्ण के लोग अपवित्र हो जाते है। वर्ण का आधार कर्म के स्थान पर जन्म को माना गया। क्षत्रिय वर्ण का कार्य शस्त्र द्वारा राज्य की रक्षा करना था और वैश्य कृषि, पशुपालन व्यापार का कार्य करते थे और राज्य को कर चुकाते थे।

कौटिल्य ने शूद्रों को 'वार्ता' का अधिकार दिया, निश्चित है कि इस व्यवस्था से शूद्र के आर्थिक सुधार का प्रभाव उसकी सामाजिक स्थिति पर भी पड़ा होगा। वैश्यों के सहायक के रूप में अथवा स्वतंत्र रूप में शूद्र भी कृषि, पशुपालन तथा व्यापार करते थे। अर्थशास्त्र में शूद्र को म्लेच्छ से भिन्न और आर्य कहा गया है तथा आर्यशूद्र को दास नहीं बनाया जा सकता था।

चार वर्णों के अतिरिक्त कौटिल्य ने अनेक वर्णसंकर जातियों का उल्लेख किया है। धर्मशास्त्रों के अनुसार इनकी उत्पत्ति अनुलोम और प्रतिलोम विवाह से हुई। कौटिल्य ने चाण्डालों के अतिरिक्त अन्य सभी वर्णसंकर जातियों को शूद्र माना है।

मेगस्थनीज के अनुसार अन्तर्जातीय विवाह नहीं होते थे और न ही अपने व्यवसाय को दूसरी जाति के व्यवसाय से बदला जा सकता था। केवल ब्राह्मणों को ही आपात काल में क्षत्रिय तथा वैश्य का व्यवसाय अपनाने की अनुमति दी गयी थी। मेगस्थनीज ने भारतीय समाज को सात जातियों में विभक्त किया है –
1. दार्शनिक 2. किसान 3. अहीर 4. कारीगर या शिल्पीं 5. सैनिक 6. निरीक्षक 7. सभासद या अन्य शासक वर्ग। संभवतः विदेशी होने कारण मेगस्थनीज भारतीय समाज की जटिलताओं को समझने में असमर्थ रहा और उसका वर्गीकरण भारतीय वर्णव्यवस्था या जाति व्यवस्था से मेल नहीं खाता।

मौर्यकालीन अर्थव्यवस्था में दासों का अधिक योगदान था। त्रिपिटिक में 4 तथा अर्थशास्त्र में 9 प्रकार के दासों का वर्णन है अब दास प्रथा केवल आर्थिक कारणों से सम्बन्धित थी। कौटिल्य के विवरण से स्पष्ट है कि राज्य की भूमि पर कृषि कार्य में, खदान में, कारखानों और सुरक्षा प्रबंधों में भी दास एवं दासियों का प्रयोग किया जाता था।

बौद्ध साहित्य में स्त्रियों की दशा का जो चित्रण मिलता है उससे स्पष्ट है कि वैदिक काल की अपेक्षा उनकी दशा खराब हो गयी थी। उनके सामाजिक तथा शैक्षणिक अधिकारों में कमी आयी। उन्हें पुनर्विवाह तथा नियोग की अनुमति थी। बौद्ध साहित्य से पता चलता है कि में सगोत्र विवाह समाज में होते थे। शाक्य अपने ही कुल में अपनी कन्याओं का विवाह करते थे। महावीर की पुत्री का विवाह भी उनकी बहन के पुत्र जामालि के साथ सम्पन्न हुआ था। समाज में प्रणय विवाहों तथा अन्तर्वर्ण विवाहों के भी उल्लेख मिलते है। उदयन तथा वासवदत्ता का विवाह प्रणय विवाह का उदाहरण हैं।

200 ई0 पू0 के0 पूर्व का काल गंगाघाटी में आर्थिक परिवर्तनों की दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा है। इस काल की आर्थिक दशा का ज्ञान ब्राहमण तथा ब्राहमणेत्तर साहित्य के अतिरिक्त विभिन्न स्थानों की खुदाई में प्राप्त किये गये पुरातात्विक अवशेषों के आधार पर भी करते हैं। इस काल के भारतीय जीवन में नागरीय तत्व प्रधान होते हुये दिखाई देते हैं। वैदिक कालीन ग्रामीण अर्थव्यवस्था का स्थान अब नागरीय अर्थव्यवस्था ने ग्रहण कर लिया।

इस युग में कृषि अधिकांश जनता के जीवन का आधार थी। पाणिनी ने अपनी अष्टाध्यायी में कृषि और 'कृषिबल' दोनों शब्दों का प्रयोग किया है। पाणिनी ने समस्त कृषकों को तीन साधारण कोटियों में विभक्त किया है – 1. अहलि 2. सुहलि 3. दुर्हलि। हल के लिए 'सीर' का प्रयोग किया गया है। जो भूमि खेती के काम आती थी। उसे 'क्षेत्र' कहते थे। पाणिनी ने दो प्रकार के उपजों का उल्लेख किया है – 1. कुष्टपच्या 2. अकुष्टपच्या । कौटिल्य के अर्थशास्त्र से कृषि के विकास की अवस्था का पता चलता है। वह कृषि के बारे में राज्य की निश्चित नीति का उल्लेख करता है जिससे उत्पादन में वृद्धि होकर राज्य की आय बढ़ती है तथा किसानों का भी हित होता है। कौटिल्य ने पशुपालन, कृषि तथा व्यापार के लिए 'वार्ता' शब्द का प्रयोग किया है। बौद्ध एवं जैन ग्रन्थों में दुर्भिक्ष पड़ने का उल्लेख मिलता है। धर्मसूत्रों में लिखा गया है कि राजाओं एवं प्रजा को सिंचाई के लिए तालाब व कुएं बनवानें चाहिए। गृहसूत्रों में पशुधन वृद्धि के लिए मंत्र मिलते है। रूद्र से प्रार्थना की जाती थी कि पशुओं का अनिष्ट न हो।

भूमि स्वामित्व के विषय में तीन मत है। भूमिखण्ड का स्वामी वह किसान होता है जो इस पर खेती करता था। दूसरे मत के अनुसार खेतों के स्वामी ग्राम के पूरे निवासी होते थे। एक अन्य मत के अनुसार भूमि का स्वामी वह शासक होता था जो उस राज्य क्षेत्र पर शासन करता था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र से दो प्रकार की भूमि का पता चलता है राजकीय भूमि तथा व्यक्तिगत भूमि।

अर्थशास्त्र से हमें भू– राजस्व निर्धारित करने की पद्धति का पता चलता है कौटिल्य के अनुसार समय और स्थान की सुविधाओं को ध्यान में रखकर लोगों पर कर लगाना चाहिए। उसने राजा को सलाह दी है कि उपज का छठवाँ भाग कर के रूप में लेना चाहिए। अर्थशास्त्र में 'बलि' का उल्लेख है जो उपकर प्रतीत होता है तथा यह राजा उपज के 'भाग' के अतिरिक्त प्रजा से लेता था। मनुस्मृति तथा महाभारत में राजा को अन्न का (1/10 भाग) दसवां भाग कर के रूप में लेने की अनुमति दी है।

इस काल के शिल्पों में विशिष्टीकरण प्रारंभ हो गया था तथा प्रत्येक कार्य विशेषज्ञ करने लगे। शिल्पी श्रेणियों के रूप में संगठित हो गये थे। विभिन्न प्रकार की धातुओं का काम होता था तथा कपड़े बनाने तथा उन्हें रंगने का काम भी प्रारंभ हो गया था।

व्यापार तथा वाणिज्य उन्नत दशा में था। देश के अन्दर तथा विदेशों से व्यापार भी अच्छी स्थिति में था। लेन–देन में सोने चाँदी तथा तांबे के सिक्कों (निष्क, काषार्पण तथा माषक) का प्रयोग किया जाता था।

देश के भीतरी भागों में व्यापार सड़कों तथा नदियों के माध्यम से जबकि वाह्य देशों से व्यापार समुद्री मार्ग से होता था।

शुंग कालीन समाज वर्णाश्रम व्यवस्था पर आधारित था। मौर्य साम्राज्य के ध्वंसावशेषों पर उन्होनें वैदिक संस्कृति के आदर्शों की प्रतिष्ठा की और इसी कारण शुंगों का शासन काल वैदिक पुनर्जागरण का काल माना जाता है। वर्णाश्रम व्यवस्था के अन्तर्गत ब्राह्मण के प्रमुख कार्य अध्ययन–अध्यापन, यजन–याजन, दान एवं प्रतिग्रह थे। वह मृत्यु दण्ड का अधिकारी नहीं था। राज्य की रक्षा हेतु शस्त्र ग्रहण करना क्षत्रिय का कर्तव्य था। वैश्य व्यापार– वाणिज्य में संलग्न थे। शूद्र का कार्य तीनों वर्णों की सेवा करना था। शूद्र धर्मग्रन्थों के श्रावण तथा संस्कार के अधिकारी नहीं थे। मनुस्मृति शूद्रों को दासों की कोटि में रखती है। अपराध करने पर उन्हें अन्य वर्णों से अधिक दण्ड मिलता था। शूद्र की हत्या करने पर ब्राह्मण को वही दण्ड मिलता था जो कुत्ते, बिल्ली, मेढ़क, कौवे की हत्या करने पर।

इस समय चार वर्ण के अतिरिक्त बहुत सी जातियाँ पैदा हो गयी। जाति प्रथा की जटिलता बढ़ती गयी। बौद्ध धर्म के कारण अधिकांश लोग भिक्षु अथवा श्रवण जीवन की ओर आकर्षित हुये, जिससे वर्ण व्यवस्था को ठेस पहुँची परन्तु शुंग काल में पुनः वर्णाश्रम व्यवस्था व ब्राह्मणों की सर्वोच्चता स्थापित हुई।

कुषाण काल में भारतीय समाज का मूल ढांचा अपरिवर्तित रहा। परंपरागत वर्ण व्यवस्था पर विदेशियों के आक्रमण से गम्भीर खतरा उत्पन्न हो गया। इनका सामना करने के लिए सामाजिक व्यवस्थाकारों ने उन्हें व्यवस्था के अन्तर्गत स्थान देकर आत्मसात् कर लिया। स्मृतियों में इन्हें 'व्रात्य क्षत्रिय' कहा गया है।

गुप्त युगीन समाज में वर्ण– व्यवस्था पूरी तरह प्रतिष्ठित थी। वराहमिहिर के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र के घर क्रमशः पांच, चार तीन तथा दो कमरों वाला होना चाहिए। समाज के सभी वर्णों में ब्राह्मणों का प्रतिष्ठित स्थान था। यद्यपि उनका मुख्य कर्म धार्मिक एवं साहित्यिक था तथापि कुछ ब्राहमणों ने अपने जातिगत पेशों को छोड़कर अन्य जातियों की वृत्ति अपना लिया था। समकालीन अभिलेखों में 'कायस्थ' नामक पदाधिकारियों का उल्लेख मिलता है जो पेशेवर लेखक थे तथा उनकी कोई विशिष्ट जाति नहीं बन पाई थी।

समाज में संयुक्त परिवार की प्रथा थी। विवाह की आयु लड़कों के लिए 16 वर्ष तथा कन्याओं के लिए 12 वर्ष होती थी। स्मृतियों के अनुसार आठ प्रकार के विवाह प्रचलित थे। गुप्तकालीन साहित्य में स्त्रियों को प्रतिष्ठित स्थान दिया गया है। प्रायः सजातीय विवाह होते थे। ऐसे विवाह को 'अनुलोम' विवाह कहा जाता था। अब तलाक की प्रथा कमजोर पड़ गयी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि समाज में विधवाओं की दशा अच्छी नहीं थी तथा उन्हें कठोर साधना का जीवन बिताना पड़ता था। याज्ञवल्क्य–स्मृति कन्या के लिए उपनयन तथा वेदाध्ययन का निषेध करती है। सती प्रथा का उल्लेख केवल 510 ईस्वी के भानुगुप्त के एरण अभिलेख में मिलता है जिसके अनुसार उसके मित्र गोपराज की मृत्यु के पश्चात् उसकी पत्नी सती हो गयी थी। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रथा न हो समाज में लोकप्रिय हो पाई थी और न ही इसे कोई शास्त्रीय मान्यता ही मिल सकी थी। समाज में वेश्याओं के अस्तित्व का प्रमाण कामसूत्र में मिलता है।

मौर्य साम्राज्य के पतन् के पश्चात केन्द्रीय सत्ता के सिद्धान्त का भी पतन हो गया। जिसका प्रभाव तत्कालीन अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा। व्यापार– वाणिज्य में शिथिलता आयी। राज्य की आय में भी कमी आयी जिससे आम नागरिक भी अछूते नहीं रह सके। शुगं काल में कृषि तथा पशुपालन आर्थिक जीवन के प्रमुख आधार थे। वैश्य वर्ण के लोग ही प्रमुख रूप से कृषि तथा पशुपालन का कार्य करते थे। देश में नाना प्रकार के व्यवसाय तथा उद्योग–धन्धे फैले हुए थे। बौद्ध ग्रन्थ 'मिलिन्दपण्हों' में अनेक व्यवसायों का उल्लेख हुआ है,

जैसे –मालाकार, सुवर्णकार, ताम्रकार, कुम्हार तथा जौहरी आदि। श्रम–विभाजन का सिद्धान्त प्रचलित था तथा व्यवसाय आनुवांशिक होते थे। प्रमुख नगरों में व्यापारियों तथा व्यवसायियों की श्रेणियाँ थी। जातक ग्रन्थों में 18 श्रेणियों का उल्लेख मिलता है। इनके अलग–अलग व्यवसायिक नियम होते थे।

प्राचीन भारतीय इतिहास में कुषाणों का काल आर्थिक दृष्टि से सर्वाधिक समृद्धि का काल माना जाता है। इस काल में आर्थिक जीवन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है भारत का मध्य एशिया तथा पाश्चात्य विश्व के साथ घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध की स्थापना। कुषाणों ने चीन से ईरान तथा पश्चिमी एशिया तक जाने वाले रेशम के मार्ग को अपने नियंत्रण में रखा क्योंकि यह उनके साम्राज्य से होकर गुजरता था। यह मार्ग उनकी आमदनी का सबसे बड़ा स्रोत था क्योंकि इससे जाने वाले व्यापारी बहुत अधिक कर देते थे। इस काल में भारत का रोम के साथ व्यापार में वृद्धि हुई। प्लिनी भारत को बहुमूल्य पत्थरों एवं रत्नों का प्रमुख उत्पादक बताता है। उसके विवरण से ज्ञात होता है कि रोम प्रतिवर्ष भारत से विलासिता की सामग्रियाँ मँगाने में दस करोड़ सेस्टर्स व्यय करता था। वह अपने देशवासियों की इस अपव्ययिता के लिए निन्दा करता है। विलासिता सामग्रियों के बदले में भारत रोम से बड़ी मात्रा में स्वर्ण–मुद्रायें प्राप्त करता था। पेरीप्लस से भी इस विवरण की पुष्टि होती है। इसके अनुसार भारत से मसाले, मोती, मलमल हाँथी–दाँत की वस्तुएँ, औषधियाँ, चन्दन इत्र आदि बहुतायत में रोम पहुँचते थे। इनके बदले रोम का सोना भारत आता था। कुषाण कालीन भारत में व्यापार–वाणिज्य के क्षेत्र में सिक्कों का नियमित रूप से प्रचलन हुआ। सिक्कों का प्रारम्भ विम कडफिसेस के काल से हुआ तथा कनिष्क के समय तक आते–आते भारी मात्रा में स्वर्ण मुद्राओं का निर्माण होने लगा।

गुप्त राजाओं का शासन–काल आर्थिक दृष्टि से समृद्धि एवं सम्पन्नता का काल माना जा सकता है कृषि की उन्नति पर विशेष ध्यान दिया गया। अमरकोष में लोहे से बने हल के फाल के लिए पांच नाम दिये गये है। जिससे सूचित होता है कि यह महत्वपूर्ण कृषि उपकरण सर्वसुलभ था। कालिदास ने कृषि तथा पशुपालन को राजकीय सम्पत्ति का एक बड़ा साधन निरूपित किया है। धान, गेहूँ, गन्ना, जूट, तिलहन, कपास, ज्वार–बाजरा, मसाले, धूप, नील आदि प्रभूत मात्रा में उत्पन्न होते थे। सिंचाई की समुचित व्यवस्था थी। उद्योग–धन्धे उन्नति पर थे। कपड़े का निर्माण करना इस काल का सर्वप्रमुख उद्योग था। जिससे बहुसंख्यक लोगों को जीविका मिलती थी। इसके अतिरिक्त हांथी दाँत की वस्तुएं बनाना, मूर्तिकारी, चित्रकारी, शिल्प–कार्य, मिट्‌टी के बर्तन बनाना, जहाजों का निर्माण आदि इस समय के अन्य प्रमुख उद्योग धन्धे थे।

गुप्त युग में व्यापार–व्यवसाय के क्षेत्र में भी अभूतपूर्व प्रगति हुई। व्यवसाय व उद्योग का संचालन श्रेणियाँ करती थीं। श्रेणी एक ही प्रकार के व्यवसाय अथवा शिल्प का अनुसरण करने वाले लोगों की समिति होती थी। मन्दसोर के लेख में 'पट्‌टवाय श्रेणी' (रेशमी सूत बुनने वालों की समिति) तथा इन्दौर लेख में तैलिक श्रेणी का उल्लेख मिलता है। श्रेणियाँ बैंकों का भी कार्य करती थी साथ ही साथ में सूद पर धन देती थी। राज्य सामान्यतः उनका सम्मान करता था। स्मृतियों में राजा को निर्देश दिया गया है कि वह श्रेणियों के रीति–रिवाजों का पालन करवाये। ये अपने सदस्यों के झगड़ों का निपटारा स्वतः करती थी। प्रत्येक श्रेणी के पास अपनी अलग मुहर होती थी। व्यापार वाणिज्य में नियमित सिक्कों का प्रचलन हो चुका था। गुप्त राजाओं ने सोने, चाँदी तथा तांबे के बहुसंख्यक सिक्के चलावाये। इस समय सोने तथा चांदी के सिक्कों का अनुपात 1:16 था। सामान्य लेन–देन कौड़ियों में होता था।

गुप्त युग में व्यापार में प्रगति हुई। सड़कों द्वारा प्रमुख नगर आपस में जुड़े हुए थे। भड़ौच, उज्जयिनी, प्रतिष्ठान, विदिशा, प्रयाग, पाटलिपुत्र, वैशाली, ताम्रलिप्ति, मथुरा, अहिच्छत्र, कौशाम्बी आदि प्रमुख व्यापारिक नगर थे। इस समय बंगाल में ताम्रलिप्ति प्रमुख बन्दरगाह था। जहाँ से चीन, लंका, जावा, सुमात्रा आदि देशों

के साथ व्यापार होता था। पश्चिमी भारत का प्रमुख बन्दरगाह भृगुकच्छ (भड़ौंच) था जहाँ से पश्चिमी देशों के साथ समुद्री व्यापार होता था। कपड़े, बहुमूल्य पत्थर, हांथी–दाँत की वस्तुएँ, गरम मसाले, नारियल, सुगन्धित द्रव्य, नील दवायें आदि निर्यात की प्रमुख वस्तुएँ थी।

छठवीं शताब्दी ई0पू0 का काल गंगाघाटी में विभिन्न धर्मों के उदय का काल रहा है। इन नवीन धर्मों में जैन व बौद्ध धर्म का प्रमुख स्थान रहा। बौद्ध धर्म ने पहले से चले आ रहे वैदिक धर्म पर प्रहार किया परिणाम स्वरूप इसके महत्व में कमी आयी। मौर्य साम्राज्य के पतन और शुंगों के राज्यारोहरण को बौद्धों के प्रति ब्राह्मण प्रतिक्रिया के रूप में देखा जाता है। जब बौद्ध व जैन धर्म ने ब्राह्मणवाद पर सवाल खड़े करने शुरू किये तो इन सवालों के प्रतिक्रिया स्वरूप 200 ई0पू0 के आस–पास मनुस्मृति की रचना हुई। इसमें पुनः एक बार ब्राह्मण धर्म की सर्वश्रेष्ठता का प्रतिपादन हुआ। अपनी विशिष्टता तथा बौद्धों से हुई क्षतिपूर्ति और अन्य वर्गों पर नियंत्रण स्थापित करने हेतु कठोर आचार संहिता का प्रतिपादन हुआ, जिसके कारण शूद्र, वैश्य और स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आयी।

200 ई0पू0 के बाद आने वाले विदेशी आक्रमणकारी जब भेदभाव रहित बौद्ध धर्म स्वीकार करने लगे तो ब्राह्मण समाज ने भी शकों, यवनों को वर्ण व्यवस्था में समाहित किया क्योंकि इन अच्छी राजनैतिक हैसियत व विजेता जातियों को ब्राह्मण धर्म केवल म्लेच्छ कहकर उपेक्षित नहीं कर सकता था। फलतः इन्हें निम्न कोटि के क्षत्रिय का दर्जा दिया। विदेशी लोगों के कारण जो सामाजिक तनाव उत्पन्न हुआ उसका एक प्रायोगिक समाधान वर्ण संकर की संकल्पना में दृष्टिगोचर होता है।

अध्ययन काल में चार वर्ण के अतिरिक्त बहुत सी जातियाँ पैदा हो गयीं। जाति प्रथा की जटिलता बढ़ गयी। इस काल में पूर्व काल की अपेक्षा वैश्यों व शूद्रों के बीच का अन्तर कम हो गया। मौर्य काल की अपेक्षा इस काल में स्त्रियों की स्थिति खराब हो गयी। अब उनके जन्म को शुभ नहीं माना जाता था। पुत्री के जन्म की अपेक्षा पुत्र के जन्म को अधिक महत्व दिया जाने लगा। स्मृतियों में उन पर अनेक प्रतिबन्ध लगाये जाने का स्पष्ट निर्देश प्राप्त होता है। मनुस्मृति के विवरण से पता चलता है कि इस समय समाज में बाल विवाह का प्रचलन हो गया तथा कन्याओं का विवाह आठ से बारह वर्ष की आयु में किया जाने लगा। विवाह की आयु घट जाने से स्त्रियों की शिक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। अब उन्हें पति के पूर्णतया अधीन बना दिया गया। मनुस्मृति में एक स्थान पर बताया गया है कि स्त्री को अपने पति की देवता के समान पूजा करनी चाहिये तथा उसकी इच्छा के प्रतिकूल कोई काम नहीं करना चाहिए भले ही उसका पति दुश्चरित्र अथवा लम्पट ही क्यों न हो।

200 ई0पू0 के बाद आर्थिक गतिविधियों पर राज्य के नियंत्रण में कमी आयी। अब किसान स्वतंत्र रूप से खेती का कार्य करने लगे। राज्य का कृषि कार्यों में रूचि कम हुई परिणाम स्वरूप कृषक सिंचाई के साधनों एवं हल, बैल आदि उपकरणों की व्यवस्था स्वयं करने लगे। मौर्य सम्राटों ने सड़कों के निर्माण तथा एकात्मक शासन व्यवस्था की स्थापना करके भारतीय उपमहाद्वीप में व्यापार को प्रोत्साहन दिया जिससे व्यापार वाणिज्य की उन्नति हुई। मौर्य साम्राज्य के पतन के साथ ही इसमें ह्रास आया। शुंग काल में व्यापार वाणिज्य में भारी कमी आयी। कुषाण काल में पुनः व्यापार वाणिज्य में उन्नति हुई। समुन्नत व्यापार वाणिज्य के कारण ही यह काल आर्थिक दृष्टि से सर्वाधिक समृद्ध काल माना जाने लगा। पूर्व काल में व्यापार का स्वरूप जहाँ राष्ट्रीय था वहीं कुषाण काल में यह मध्य एशिया तथा पाश्चात्य विश्व के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ कर अन्तर्राष्ट्रीय प्रकृति का हो गया। प्राचीन भारतीय इतिहास में कुषाणों ने प्रथम बार रेशम मार्ग पर नियंत्रण स्थापित किया। अब भारतीय व्यापारी सिल्क व्यापार में बिचौलियों के रूप में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया।

इसके फलस्वरूप उत्तरी–पश्चिमी भारत एक अत्यन्त समृद्ध व्यापारिक केन्द्र रूप में विकसित हो गया। इस समय रोम साम्राज्य का भी उदय हो रहा था। रोम तथा पार्शिया के बीच सम्बन्ध अच्छे नहीं थे। अतः चीन के साथ व्यापारिक सम्बन्ध रखने के लिए रोमनों को कुषाण साम्राज्य की मित्रता पर ही निर्भर रहना पड़ता था। कुषाण शासकों ने प्रथम बार शुद्ध स्वर्ण –सिक्के चलवाये। इसका वजन 123–24 ग्रेन है तथा इनमें स्वर्ण की मात्रा 92 प्रतिशत है। उत्तर तथा पश्चिमोत्तर प्रदेशों में कुषाणों ने भारी मात्रा में ताँबे के सिक्के प्रचलित करवाये। गंगा घाटी तथा मध्य एशिया के विभिन्न स्थलों की खुदाइयों से स्पष्ट हो जाता है कि छठवीं शताब्दी ई0पू0 में जिस द्वितीय नगरीकरण की प्रक्रिया प्रारंभ हुई वह कुषाण काल में अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंच गयी। विविध स्थलों की खुदाई में प्राप्त भौतिक अवशेषों से स्पष्ट है कि कुषाण काल भवनों, नगरों तथा सिक्कों की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध था। जितने अधिक सिक्के तथा उनके साँचे इस काल (ई0पू0 200 से 200 ई0) में मिले है उतने किसी अन्य काल में नहीं मिलते विविध धातुओं से मुद्रायें तैयार करना मौर्योत्तर नगरीय जीवन की खास विशेषता थी जिसने रोम तथा मध्य एशिया से होने वाले व्यापार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। आर0एस0 शर्मा ने अपने ग्रन्थ अर्बन डिके इन इण्डिया' में एक सौ पच्चीस से अधिक उत्खनित स्थलों की सूची प्रस्तुत की है जिससे पता चलता है कि नगरीकरण अपनी उन्नति की पराकाष्ठा पर था। विकसित व्यापार–वाणिज्य की यह प्रवृत्ति थोड़े–बहुत परिवर्तनों के साथ गुप्त काल तक विद्यमान रही।

mijksDr foospu ls Li"V gS fd 200 bZ0iw0 ds iwoZ dk lekt o.kZ O;oLFkk ij vk/kkfjr FkkA tgka czkg~e.k fo'ks"kkf/kdkj ;qDr oxZ Fkk] ogha 'kwnz dh fLFkfr fuEu FkhA v/;;u dky dh lkekftd fLFkfr ,d laØe.k dkyhu fLFkfr FkhA bl dky esa oSfnd /keZ dh LFkkiuk] 'kwnzksa dh gs; fLFkfr] fonsf'k;ksa dk vkRelkrhdj.k vkSj o.kZladj tkfr;ksa dh mifLFkfr fn[kkbZ nsrh gSA fL=;ksa dh Hkh lkekftd& vkfFkZd fLFkfr esa iwoZdky dh vis{kk gzkl vk;kA

अध्ययन काल के पूर्व कालीन अर्थव्यवस्था का मूल आधार कृषि व पशुपालन था। आर्थिक गतिविधियों पर राज्य का कठोर नियंत्रण स्थापित था। श्रेणी तथा निगम जैसी व्यापारिक संस्थाएं अपनी शैशवावस्था में थी। नियमित सिक्कों का प्रचलन नहीं हो पाया था। नगरीकरण अपनी प्रारंभिक अवस्था में था। 200 ई0पू0 500 ई0 के बीच अर्थव्यवस्था में व्यापार–वाणिज्य का महत्व बढ़ा तथा आर्थिक गतिविधियों पर राज्य के नियंत्रण में कमी आयी। श्रेणी संगठन पूरी तरह से स्थापित हुए। व्यापार में नियमित रूप से सिक्कों का प्रचलन हुआ तथा नगरीकरण की प्रक्रिया भी अपनी पूर्णता को प्राप्त हुई।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची

अग्रवाल, बी0एस0	:	इण्डिया ऐज नोन टू पाणिनी, लखनऊ 1952
अल्टेकर, ए0एस0	:	एजुकेशन इन एन्श्येन्ट इण्डिया बनारस 1934
कौशाम्बी, डी0डी0	:	द कल्चर एण्ड सिविलाइजेशन ऑफ इण्डिया इन हिस्टोरिकल आउटलाइन, लण्दन 1965
घूरये, जी0एस0	:	इण्डियन कॉस्टयूम, बम्बई 1951
जायसवाल, के0 पी0	:	हिन्दू पॉलिटी, द्वितीय संशोधित संकरण, बंगलौर 1943
थापर, रोमिला	:	अशोक एण्ड डिक्लाइन ऑफ द मौर्याज, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली 1973
बाशम, ए0 एल0	:	द स्टेट इन एन्श्येन्ट इण्डिया, इलाहाबाद 1928
भण्डारकर डी0आर0	:	लेक्चर्स ऑन अर्ली हिस्ट्री आफ इण्डिया
शर्मा, आर0 एस0	:	प्रारम्भिक भारत का आर्थिक और सामाजिक इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय 1928
स्मिथ, बी0ए0	:	द अर्ली हिस्ट्री आफॅ इण्डिया, चतुर्थ संस्करण आक्सफोर्ड 1959
के0 ए0 नीलकंड शास्त्री	:	(संपा0) एज ऑफ दि नन्दाज एण्ड मौर्याज, दिल्ली 1967
अल्टेकर, ए0 एस0	:	एजुकेशन इन एन्श्येन्ट इण्डिया 1957 द पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन
भटनागर, के0 पी0	:	इण्डिया रूरल इकॉनोमी, कानपुर 1960
चटोपाध्याय, एस0	:	अर्ली हिस्ट्री ऑफ नॉर्थ इण्डिया (200 बी0सी0 –650 ए0डी0), कलकत्ता 1958
के0एल0 दफतरी	:	सोशल इन्स्टीट्यूशन एन्श्येन्ट इण्डिया, नागपुर 1947
दत्त, एन0 के0	:	सोशल इन्स्टीट्यूशन इन एन्श्येन्ट इण्डिया, नागपुर 1947
दत्त, एन0 के0	:	सोशल इन्स्टीट्यूशन इन एन्श्येन्ट इण्डिया, कलकत्ता 1937
दत्त, आर0सी0	:	हिस्ट्री ऑफ सिविलाइजेशन इन इन्श्येन्ट इण्डिया कलकत्त, 1906
घुरये, जी0 एस0	:	कास्ट एण्ड क्लास इन एन्श्येन्ट इण्डिया बाम्बे, 1957
गोखले, बी0 एस0	:	कास्ट एण्ड क्लास इन एन्श्येन्ट इण्डिया बाम्बे, 1957
गोखले, बी0 जी0	:	एन्श्येन्ट इण्डिया हिस्ट्री एण्ड कल्चर बॉम्बे 1956
आयंगर, पी0 टी0 एस0	:	लाइफ इन एन्श्येन्ट इण्डिया, मद्रास 1912–1962
पाण्डेय, विमल चन्द्र	:	भारतवर्ष का सामाजिक इतिहास, इलाहाबाद, 1960
मजुमदार, आर0 सी0	:	एन्श्येन्ट इण्डिया बनारस, 1952
मुखर्जी, आर0 के0	:	एन्श्येन्ट इण्डिया, इलाहाबाद 1956 हिन्दू सिविलाइजेशन बम्बई 1989
यादव, बी0एन0एस0	:	सोसाइटी एण्ड कल्चर इन नॉरदर्न इण्डिया इलाहाबाद 1973

कादरी, ए0ए0एम0 एमस : प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं कलायें, बरेली 1972
गोखले, बी0के0 : एन्श्येन्ट इण्डिया (चतुर्थ संस्करण) नई दिल्ली, कलकत्ता, 1959
मजूमदार, आर0 सी0 एच0सी0 : सं0 एन0 एडवान्सड हिस्ट्री आफॅ इण्डिया, लन्दन 1960
राय चौधरी एवं के0 के0 दत्त
राधाकृष्णन, एस0 : हिन्दू व्यू ऑफ लाइफ, लन्दन 1927
रैप्सन, ई0 जे0 : कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, कैम्ब्रिज 1922

शोध पत्र एवं पत्रिकायें –

- जर्नल ऑफ द बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी
- जर्नल ऑफ द इलाहाबाद हिस्टोरिकल सोसाइटी
- जर्नल ऑफ द गंगानाथ झा रिसर्च इन्स्टीट्यूट, इलाहाबाद (मानित विश्वविद्यालय)
- जर्नल ऑफ द इण्डियन हिस्ट्री
- जर्नल ऑफ द यू0 पी0 हिस्टोरिकल सोसाइटी
- एनल्स ऑफ द भण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट
- जर्नल ऑफ द बिहार रिसर्च सोसाइटी
- जर्नल ऑफ द रॉयल एशियाटिक सोसाइटी
- मोमायर्स ऑफ द आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया।

*****